f'k{kk esa ufrd f'k{kk dk lekos'k

foosd flag iq.Mhj
पुस्तकालय विभाग, जे0वी0 जैन कालिज, सहारनपुर, उ0प्र0, भारत

çLrkouk

मानवता आज दो राहे पर खड़ी है। मानव धर्म के बुनियादी मूल्य यथा शांति, सोहार्द, सहिष्णुता त्याग, प्रेम व स्नेह आज कमजोर होते जा रहे हैं। भौतिकवाद की आँधी से आज विश्व का कोई देश अछूता नहीं है। भारत भी अपवाद नहीं हैं सम्पूर्ण विश्व इस अंधी दौड़ में मानवता व मानव–मूल्यों को पीछे छोड़ चुका है। भारत वर्ष ने निःसंदेह आज विज्ञान व तकनीक के क्षेत्र में असीमित उन्नति हासिल की है। भारतीय तकनीकी संस्थानों यथा आई०आई०टी० व आई०आई०एम० ने विश्वस्तरीय वैज्ञानिकों, इंजीनियरों एवं चिकित्सकों प्रबंधकों का निर्माण किया है जिनकी ख्याति सारे विश्व में व्याप्त है। इसी प्रकार की उपलब्धियाँ हमने अन्तरिक्ष–उड़ान रक्षा तकनीक एवं परमाणु–ऊर्जा क्षेत्रों में हासिल की है। भारत की गिनती इन समस्त क्षेत्रों में चुनिंदा देशों में होती है। किन्तु इस उन्नति का दूसरा पहलू निराश करने योग्य है। प्राचीन काल का गौरवमयी इतिहास जो हमारी धरोहर है हमें विश्व की प्राचीन संस्कृति का दर्जा देते हैं। हमारे उपनिषदों ने हमें 'वसुधैव कुटम्बकम' अर्थात सारा संसार मेरा परिवार है सिखाया है। इसके बावजूद हम कभी धर्म, कभी क्षेत्र, जाति व यहाँ तक भाषा के नाम पर लड़ते हैं। मस्जिद मन्दिर व अन्य धार्मिक स्थान गरीबी, महामारी, कुपोषण, बेरोजगारी, सामाजिक अन्याय व अकाल से भी बड़े मुद्दे हैं। हमें आज दुःखातुर पड़ौसियों व अपने देशवासियों की पीड़ा भी महसूस नहीं होती। हमारे नैतिक मूल्य धर्मान्धता व सांप्रदायिकता की भेंट चढ़ चुके हैं। भारतीय आध्यात्मिकता व पतंजलि का अपरिग्रह जैसे आदर्श जो त्याग पर आधारित थे आज कोई महत्व नहीं रखते। शिक्षा व मूल्यों के बीच खाई बढ़ती जा रही है। येन–केन प्रकारेण स्वार्थसिद्ध सबसे बड़े नैतिक–मूल्य बन गए हैं। वर्तमान काल में धर्म राजनीति का अखाड़ा बन गया है। बड़े–बड़े धर्माचारी व मठाधीश जिन्हें त्याग व समर्पण का उदाहरण प्रस्तुत करना चाहिए आज अकूत संपत्ति रखते हैं एवं भ्रष्टाचाार में लिप्त पाए जाते हैं। यह विडंबना नहीं तो और क्या है। अहिंसा के स्थान पर हिंसा ही आज परम धर्म बनता जा रहा है। दुनिया का कोई धर्म आपस में बैरभाव रखना नहीं सिखाता किन्तु आज धार्मिक उपदेश किताबों व अनुष्ठानों तक ही सीमित रह गए हैं।

आज हम नैतिक–मूल्यों व सद–आचरण से दूर जा चुके हैं। जिसका उदाहरण आए दिन बढ़ते अपराध हैं। जिनकी खबर हम अपहरण, हत्या, डकैती, बलात्कार के रूप में रोज पढ़ते हैं। बेशक हम महाशक्ति के रूप में उभर रहे हैं किन्तु हमारा चारित्रिक पतन होता जा रहा है। इस संदर्भ में मुख्य चुनाव आयुक्त का यह विचार साधारण नहीं हैं पूर्व जब उन्हें कहना पड़ा भारतीय राजनीति एक असाध्य कैंसर बन चुकी है।

अतः आज हमारे लिए चिंता व चिन्तन दोनों का समय हैं। जबकि हम ऐसे मुद्दों पर संवेदनशील होकर विचार करें। हमें आज एकजुट होकर शैक्षिक विमर्श के दायरें में रहकर इन समस्त विषयों का समाधान खोजना है जिससे एक सुःखद भविष्य व विकसित भारत का स्वप्न यथार्थ में परिलक्षित हो सके।

f'k{kk esa ufrd ewY;ksa dh vko';drk

वस्तुतः यदि शिक्षा छात्रों के भावी जीवन की समस्याओं के बुद्धिमत्तापूर्ण विश्लेषण व निर्णय करने का प्रशिक्षण नहीं दे पाती तो यह अपने एक महत्वपूर्ण उद्देश्य का तिरस्कार कर रही है। प्राचीन भारतीय संस्कृति में मूल्यों को प्रमुखतः चार पुरुषार्थो के रूप में लिया गया है, ये चार पुरुषार्थ हैं – धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष। सामाजिक संदर्भ की दृष्टि से धर्म अत्यन्त व्यावहारिक एवं प्रमुख मूल्य है। धर्म अपने आप में असंख्य गुणों का सम्मुच्य है। सदाचार, सत्य अहिंसा आदि शाश्वत मूलय हैं जोकि मूल्य आधारित शिक्षा की नींव है। इन उच्च आदर्शों को तब तक नही पाया जा सकता जब तक यह न माना जाए कि इनके पीछे कौन से नैतिक–मूल्य हैं। इस समझने के लिए जरूरी है कि यह जाना जाए कि हमारे संत, पूर्वज इस बारे में क्या सोचते थे। उनके विचारों को उसी रूप में समझा जाए। शिक्षा ऐसी होनी चाहिए जिससे पारस्परिक भाईचारे को बढावा मिले। ऐसी शिक्षा में सत्य, सद्आचरण, शांति, प्रेम ओर अहिंसा जैसे शाश्वत मूल्य शिक्षा का आधार होने चाहिए। न्यायालय ने माना कि जब तक भारतीय नागरिकों में शिक्षा के साथ–साथ मानवीय, नैतिक, चारित्रिक, सत्य प्रेम और सहिष्णुता जैसे मूल्य नहीं होंगे तब तक कोई भी लोकतंत्र या संविधान कारगर नहीं हो सकता है।

ßfo|ky; Lrj ij Nk=ksa dks ufrd vkSj /kkfeZd f}kUrksa dk 0;Dr djuk okyh dgkfu;ksa i<kbZ tk;sa Nk=ksa dks egku 0;fDr;ksa dh thofu;ka i<kbZ tk;sa thofu;ksa esa egku 0;fDr;ksa ds mPp fopkjksa vkSj J")B Hkkoukvksa dk lekos'k fd;k tk,A ufrd ewY;ksa ds fodkl gsrq l>ko fn;k fd fo|kFkhZ;ksa dks çkFkfed d{kk ls ysdj fo'ofo|ky; Lrj rd mi;Dr ufrd&f'k{kk nh tk,Aß

वस्तुतः तीव्र आर्थिक विकास ओर सामाजिक रूपान्तरण के कारण आज संयुक्त परिवारों में विघटन हो रहा है। पहले समय में माता–पिता, दादा–दादी आदि घर पर बच्चों को सांस्कृतिक और नैतिक मूल्यों की शिक्षा देते थे। इस तरह ऐतिहासिक दृष्टि से भारतीय शिक्षा प्रणाली में शिक्षा के एक अभिन्न अंग के रूप में मूल्यों की शिक्षा का स्पष्ट समावेश नहीं पाया जाता था। लेकिन आज के समय में जब माता–पिता, दोनों काम करते हैं और बच्चों की भावात्मक और नैतिक आवश्यकताओं का ध्यान रखने के लिए दादा–दादी पास नहीं होते, संस्कृति, सदाचार, नैतिक–मूल्य परिवार के दायरे से बाहर हो गए हैं, मगर वे अभी शिक्षा प्रणाली की जिम्मेदारी नहीं बन सकें।

ufrd ewY;ksa dk fodkl&euksoSKkfud fo'ys"k.k

विवेक और मूल्यों का विकास समाजीकरण की प्रक्रिया में तत्काल ही आरम्भ हो जाता है। बाल्यकाल में बच्चे को झूठ न बोलने और चोरी न करने की शिक्षा दी जाती है। यह प्रारम्भिक नैतिक शिक्षा एक परिपक्व किशोर के मूल्यों के विकास की प्रक्रिया से भिन्न होती है। पांच या दस वर्ष का बच्चा अपना स्वयं का सिद्धान्त तैयार करने हेतु साधारणतः नैतिक क्षमतावान नहीं होता है। यह आवश्यक है कि सभी सम्भव विकल्पों पर विचार हो। वह इस योग्य होना चाहिए उसके कारणों तथा प्रभावपूर्ण तर्क, समभाव्यता एवं अभिकल्पना पर विचार कर सके।

Hkkjrh; lafo/kku esa of.kZr ufrd&ewY; ,oa ukxfjd&cks/k lEcU/kh rRo

संविधान किसी भी राष्ट्र की इच्छाओं, आकांक्षाओं, आदर्शों व जीवन–मूल्यों का आईन होता है। भारतीय संविधान एक वहद् प्रलेख है जिसमें अनके स्थानों पर नैतिक–मूल्य तथा नागरिक–बोध का वर्णन मिलता है।

सरकार को चुनने और बदलने की संप्रभुता अन्ततः लोगों के पास है और सरकार अन्ततः उनके प्रति जिम्मेदार ओर जवाबदेह है। इसके लिए संसदीय लोकतांत्रिक गणतन्त्र की संस्थागत व्यवस्था की आवश्यकता थी, जिसका दायित्व आम भलाई और लोगों के कल्याण के अभ्यांतर मूल्य और उद्देश्य प्राप्त करना है।

धर्मनिरपेक्षता का अभिप्राय सभी धर्मों को बराबर का सम्मान देना है न कि धर्म के सम्बन्ध में राज्य की तटस्थता इसका अर्थ यह नहीं कि राज्य अधार्मिक अथवा धर्म–विरोधी है, अपितु यह सभी धर्मों को समान स्वतन्त्रता देता है।

न्याय वह सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक है जिसके तहत वह सभी नागरिकों के लिए समान रूप से और बिना किसी भेदभाव के प्राप्त होना चाहिए और इससे सरकार का यक दायित्व हो जाता है कि वह लोगों के कल्याणार्थ एक ऐसी नई सामाजिक और आर्थिक व्यवस्था स्थापित करने का भरसक प्रयास करे, जिसमें राष्ट्रीय जीवन के सभी संस्थान किसी प्रकार का भेदभाव किए बगैर न्याय की भावना से ओत–प्रोत हों। विचार, अभिव्यक्ति, विश्वास, आस्था और पूजा की स्वतन्त्रता की सकारात्मक अवधारणा किसी लोकतान्त्रिक राज्यतंत्र में नितान्त आवश्यक है। मौलिक अधिकार न्याय योग्य है और इन्हें व्यक्ति और राष्ट्र के विकास के लिए अनिवार्य समझा जाता है। मौलिक अधिकारों में अनिवार्य मानव अधिकार शामिल है ताकि व्यक्ति की प्रतिष्ठा के बुनियादी मानव–मूल्य की रक्षा की जा सके। नागरिकों की व्यैक्तिक स्वतन्त्रता पर केवल उतनी ही रोक लगाई जाए जितनी कि लोकहित में नितान्त आवश्यक हो। क्योंकि ये स्वतन्त्रताएं नागरिक के नैतिक, सामाजिक और राजनीतिक जीवन का आधार होती हैं।

ufrd&ewY; ,oa ukxfjd&cks/k ds lanHkZ esa ukxfjdrk lEcU/kh

Ldwy iqLrdksa esa HkkxhnkHkko dh NfV

स्कूल पुस्तक का संदर्भ यहां स्कूल में पढ़ाई जाने वाली पाठ्य–पुस्तक से है। आम तौर पर स्कूली पुस्तक अक्षर से भाषा ज्ञान और अंक से गणित का बोध तथा पर्यावरण की जानकारी देने वाला साधान समझा जाता है, जबकि बच्चों में अवधारणा के विकास में पुस्तकों की भूमिका महत्वपूर्ण है। पुस्तकों में वर्णित प्रसंग के माध्यम से बच्चों के मस्तिष्क में तस्वीर बनती है। स्कूल पुस्तकों से बच्चों के मन में खास तरह से सोचने–विचारने की प्रक्रिया शुरू होती है। यही प्रक्रिया आगे चलकर अवधारणा बनती है। लेकिन स्कूल पुस्तकों के विमर्श में इसका ख्याल नहीं रखा जाता है। इसलिए स्कूली पुस्तकों के बारे में सार्थक बातचीत करना काफी जटिल

 ISSN : 2348-0033 (Online) | ISSN : 2249-4944 (Print)

काम है, जबकि राष्ट्र निर्माण में स्कूली पुस्तका की भूमिका महत्वपूर्ण है। यही बाल सृजन का बुनियादी आधार है। स्कूली पुस्तकों के विषय–वस्तु के संदर्भ और प्रभाव को समझना जरूरी है। सकूली शिक्षा की गतिविधियाँ अब एक–दूसरे की पूरक नहीं समझी जातीं, जबकि किसी शैक्षिक पहलू को अकेले ठीक करने से स्कूली शिक्षा में सुधार संभव नहीं। स्कूली पुस्तकों को शिक्षा का एक उपकरण मात्र समझा जाता है। स्कूली शिक्षा में इस साधन का उपयोग मात्र कठपुतली की तरह ही किया जाता है। नित्य नई पुस्तका का छपना ओर कटना मात्र ही रह गया है इनका बच्चों की शिक्षा से कोई सम्बन्ध नहीं है। स्कूली पुस्तकों की समीक्षा के काम का शिक्षा शास्त्र से गहरा रिश्ता है। यदि स्कूली पुस्तकों की अवधारणा के बारे में राष्ट्रीय स्तर पर स्पष्ट तौर पर निर्णायक कदम नहीं लिया गया है तो स्कूली पुस्तकों में अनिश्चतता का माहौल बनेगा। आज की स्कूली पुस्तकों में बाजारु मूल्य का वर्चस्व कायम है।

iLrdk e HkknHkko d Hkko dk n"Vkr%

पुस्तकों को एक लिखी हुई पोथी मानते और समझते हैं। इसके लिखने वालों की एक जमायत है। यह कुछ लोगों का व्यवसाय भी है। जबकि पुस्तकों का मूल भाव सृजन का होता है। इसके माध्यम से बच्चों में ज्ञान सृजन की प्रक्रिया शुरू होती हैं बच्चों के मन में सोच विकसित करने का यह एक प्रभावकारी साधन है। स्कूली पुस्तकों के सृजन और वितरण का कर्म अतिसंवेदनशील है। निर्धारित परिप्रेक्ष्य में नियमन के लिए क्रियाविधि तय हैं इन सबों के चिंतन और कल्पना का आयाम भारतीय संविधान के संकल्प पर आधारित है। इसी क्रम में शिक्षा के सामाजिक सरोकार के भेदभाव के भाव को जानने के लिए शिशु मंदिर प्रकाशन की पुस्तकों को परखने का कार्यक्रम अपनाया गया है।

इस अध्ययन की अवधारणा का मुख्य पहलू सामाजिक जीवन–निर्माण में शिक्षा के तत्व को समझना है इसमें वैसे सभी सम्बद्ध पहलुओं को लेने का प्रयास हुआ है, जिससे बच्चों में भारतीय संविधान के मुख्य संकल्प की ओर जाने की प्रवृत्ति विकसित की जा सकती है। इस अध्ययन का स्वरूप भारतीय संविधान के संकल्प के अनुरूप में शिक्षा के फैलाव की दिशा को समझना है। अध्ययन की प्रक्रिया से निम्न प्रमुख दृष्टांत उभरे हैं :

fofHkUu f'k{kk vk;kxk] "kf{kd lfefr;k ,o vU; egRoi.k nLrkot dk ufrd&eY; ,o ukxfjd&ck/k d lnHk e fo'y'k.k%

विश्वविद्यालय शिक्षा आयोग जिसे सर्वपल्लरी राधाकृष्णन की अध्यक्षता में गठित किया गया था, ने मूल्य आधारित शिक्षा को सर्वोत्तम बताया व इस सम्बन्ध में कहा हमारे आदिकालीन शिक्षक, शिक्षण द्वारा बुद्धि विकास पर बल देते थे किन्तु आज उसका क्षरण सूचना पर आकर टिक गया हैं इस सम्बन्ध में आयोग की परट में लिखा है "Where is the wisdom we have lost in knowledge ? Where is the knowledge we have lost in information" डॉ0 राधाकृष्णन के अनुसार राष्ट्रीय एकता के लिए शिक्षा एक महतवपूर्ण तथ्य है जिसके माध्यम से व्यक्ति के सही दृष्टिकोण का विकास किया जा सकता है।

1. विद्यालय स्तर पर विद्यार्थियों को श्रेष्ठ, नैतिक और धार्मिक सिद्धान्तों को व्यक्त करने वाली कहानियाँ पढ़ाई जाएं।
2. विद्यार्थियों को महान् व्यक्तियों की जीवनियां पढ़ाई जाएं।
3. जीवनियों में महान् व्यक्तियों के उच्च विचारों और श्रेष्ठ भावनाओं का समावेश किया जाए।

विश्वविद्यालय शिक्षा का एक प्रमुख उद्‌देश्य विद्यार्थियों का नैतिक व आध्यात्मिक विकास करना है। विश्वविद्यालय को ऐसी शक्तियों को जन्म देना चाहिए जो प्रजातंत्र को सफल बनाने के लिए शिक्षा का प्रसार कर सकें, ज्ञान की निरन्तर खोज कर सकें, मानव जीवन का अर्थ तथा सार जान सकें।

माध्यमिक शिक्षा आयोग ने इस सम्बन्ध में लिखा है कि ßHkkjr u vHkh gky e jktuhfrd LorU=rk çkIr dh g vkj viu i;kIr fopkj&foe'k d ckn Lo; dk /kefujis{k ykdrU=kRed x.kjkT; ?kkf"kr fd;k g blfy, f'k{kk }kjk ukxfjdk e ,lh vknrk] vfHk:fp;k vkj pkfjf=d x.kk dk fodkl fd;k tk, ftlls fd o ykdrU=h; ukxfjdrk d nkf;Rok dk Hkyh çdkj l fuokg dj ldß

1959 e çfrikfnr Jhçdk'k lfefr d l>ko %

भारत सरकार ने अगस्त 1959 में श्री प्रकाश की अध्यक्षता में धार्मिक एवं नैतिक शिक्षा समिति की नियुक्ति की इस समिति ने जनवरी 1960 में रिपोर्ट सरकार के सम्मुख प्रस्तुत की। इस समिति का मानना है कि आज की शिक्षा के अनेक दोषों का कारण धार्मिक और नैतिक शिक्षा की उपेक्षा हैं बच्चों को उच्च चरित्र वाला और अच्छे नागरिक बनाने के लिए नैतिक–मूल्यों की शिक्षा जरूरी है।

शिक्षा के सब स्तर प्राथमिक से लेकर विश्वविद्यालय स्तर तक के लिए समिति के सुझाव इस प्रकार हैं –

1. विद्यार्थियों को सब धर्मों के आधारभूत विचारों की शिक्षा तुलनात्मक विधि से दी जाए।
2. विद्यार्थियों को महान् धार्मिक नेताओं की जीवनियों और शिक्षाओं के सार से अवगत कराया जाए।
3. जैसे–जैसे विद्यार्थियों का मानसिक विकास होता जाए वैसे–वैसे उनको नैतिक, दार्शनिक और आध्यात्मवादी सिद्धान्तों से परिचित कराया जाए।
4. प्राथमिक से लेकर विश्वविद्यालय स्तर तक के लिए उपयुक्त धार्मिक और नैतिक पुस्तकें तैयार कराई जाएं।

– प्राथमिक स्तर पर विद्यार्थियों में सेवा की भावना का विकास किया जाए।
– विद्यार्थियों को प्रति सप्ताह दो घंटे नैतिक शिक्षा प्रदान की जाए।
– माध्यमिक स्तर पर विद्यार्थियों कों संसार के महान धर्मों के महत्वपूर्ण सिद्धान्तों की शिक्षा दी जाए।
– वश्वविद्यालय स्तर डिग्री कोर्स के सामान्य शिक्षा के पाठ्यक्रम में विभिन्न धर्मों के सामान्य अध्ययन को अनिवार्य अंग बनाया जाए।
– स्नातकोत्तर कोर्स में धर्मो का तुलनात्मक अध्ययन किया जाए।

fu"d"k%

प्राचीन भारतीय विद्वान मानते थे कि समुचित नैतिक भावना और चरित्र के अभाव में मात्र बौद्धिक उपलब्धियों का कोई महत्व नहीं है। उनकी दृष्टि में सबसे अधिक महत्वपूर्ण चीज थी– सदाचार, अर्थात् आचार ही उनके लिए परमधर्म था – "मनुस्मृति में कहा गया है कि यदि कोई व्यक्ति कम ज्ञानवान हो पर सदाचारी हो, तो वह उस व्यक्ति की अपेक्षा अधिक श्रेष्ठ है जो विद्वान तो है पर दुराचारी है।"